दृश्य दर्शन

सैर कर दुनियाँ की गाफिल

'महापंडित राहुल सांकृत्यायन का घुमक्कड़ शास्त्र'

डा० रवीन्द्रनाथ मिश्र

महापंडित राहुल सांकृत्यायन को हम यायावर के रूप में ही अधिक जानते हैं। निश्चय ही वे एक असाधारण पर्यटक थे जिन्होंने घुमक्कड़ी को दुनिया का सबसे बड़ा धर्म माना। देशाटन की प्रवृत्ति के कारण ही क्रमशः उनकी दृष्टि एवं चिन्तन की गतिशीलता का विकास होता गया। अपने लम्बे सफर के दौरान राहुल जी ने विपुल साहित्य-भण्डार की सृष्टि की। विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न राहुल जी के यात्रा-साहित्य एवं दृष्टि पर प्रकाश डालने के लिए उन प्रेरक तत्वों की जाँच-पड़ताल कर लेना समीचीन होगा जिनके तहत वे घुमक्कड़ी प्रवृत्ति की ओर उन्मुख हुए।

राहुल का जीवन बहुत ही संघर्षमय था। उनके पिता गोवर्धन पांडे कनैला के गरीब किसान थे, जिनके पास परिवार पालन के लिये पर्याप्त पैसा नहीं था। पहले माँ और बाद में पिता के आकस्मिक निधन से उनके बचपन की दुनिया सूनी हो गई। पालन-पोषण ननिहाल में हुआ। नाना-नानी ने उन्हें अच्छे संस्कार दिए फिर भी माँ की स्नेहमयी ममता से वंचित रह ही गए। घर में मन नहीं लगता था। गाँव के आस-पास के जंगलों में घूमना इनकी आदत हो गयी थी। जिज्ञासु प्रवृत्ति इनकी बचपन से ही थी। 'कर्मभूमि' में अमरकान्त का निम्नलिखित विचार जीवन को भी कहीं न कहीं प्रभावित करता है।

"जिन्दगी की वह उम्र, जब इन्सान को मुहब्बत की सबसे ज्यादा जरूरत होती है, बचपन है। उस वक्त पौधे को तरी मिल जाये, तो जिन्दगी भर के लिए उसकी जड़ें मजबूत हो जाती हैं। उस वक्त खुराक न पाकर उसकी जिन्दगी खुश्क हो जाती है।" ग्यारह वर्ष में ही नाना ने इनकी शादी कर दीं इससे वे बहुत नाराज थे। चौदह वर्ष की उम्र में वे काम की तलाश में कलकत्ता भाग गए। घुमक्कड़ी के बीज राहुल के बचपन में ही पड़ गए थे जिसके सम्बन्ध में प्रभाकर माचवे का कथन है–'बिल्कुल बचपन की याद में १८९७ ई० का भयानक अकाल था, जिसमें भारत के लाखों लोग भूख से तड़पकर मर गए। गरीबी और भूख की वेदना का अनुभव सदा उन्हें अपने से नीचे तबके के लोगों के लिए करुणा और उनकी सेवा के लिए प्रेरित करता रहा। घर में भोजपुरी बोलते थे, मौलवी से उर्दू पढ़ी, ब्राह्मण वंश के संस्कृत के संस्कार थे–भाषाएँ सीखने की जिज्ञासा बढ़ती गयी। माँ की और नानी की धर्म-प्रधान वृत्ति ने उन्हे अनेक धर्मों और दर्शनों की जानकारी पाने की ओर प्रेरित किया और सबसे बड़ी बात तो घर के वातावरण से मन उचाट होकर घुमक्कड़ी का चस्का बहुत छुटपन से ही पड़ गया–वे एक तरह से चिर-प्रवासी हो गए।'

दर्जा तीसरी की उर्दू किताब में पढ़ा हुआ नवा जिन्दाबाद जिन्दाबाद का शेर मानो उनके जीवन का आदर्श बन गया।

सैर कर दुनिया की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ।
जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ।

इस लेख ने राहुल जी को अविरत यात्रा-पथ पर विश्राम नहीं लेने दिया। सन् १९१० में हिमालय यात्रा से उनकी लम्बी और बड़ी यात्राएँ शुरू हुई। ये यात्राएँ ही उनकी शिक्षा के सोपान थे। १९१७ में उन्होंने प्रतिज्ञा कर डाली कि जब तक जीवन के पच्चास वर्ष पूरे नहीं हो जायेंगे, वह आजमगढ़ की सीमा में पैर नहीं रखेंगे। इस प्रकार शुरू हुआ राहुल की यात्राओं का सिलसिला, जो कि आजीवन चलता रहा। वे निरन्तर घूमते रहे और उनकी लेखनी भी चलती रही। यह उनकी यात्राओं का ही प्रभाव है कि उन्होंने धर्म, दर्शन, इतिहास, विज्ञान, उपन्यास, कहानी और यात्रा-साहित्य आदि सभी की सर्जना की। राहुल जी अपने जीवन में चालीस वर्षों तक यात्रा करते रहे। वे लिखते हैं कि 'घुमक्कड़ी सदा मिर्च की तरह काफी कड़वी और स्वादिष्ठ रहेगी, तभी वह तरुण हृदयों को आकृष्ट कर सकेगी। मुझे घुमक्कड़ी में सदा एक प्रकार का आनन्द आता था, आनन्द आता है, अब भी कह सकता हूँ, यद्यपि शरीर उसके लिए पहले की तरह सहायक नहीं है।' यात्रा ने ही मेरे हाथ में जबर्दस्ती कलम पकड़ा दी और स्वयं ही लेखन-शैली बनती चली गयी। कलम के दरवाजे को खोलने का काम मेरे लिए यात्राओं ने जो किया, इसलिए मैं इनका बहुत कृतज्ञ हूँ।

उनकी यात्रा-पुस्तकें इस प्रकार हैं-'मेरी लद्दाख यात्रा १९२६', 'लंका' १९२६-२७, 'तिब्बत में सवावर्ष' १९३१, 'मेरी यूरोप यात्रा' १९३२, 'यात्रा के पन्ने' १९३४-३६, 'जापान', १९३५, 'ईरान' १९३५-३६, 'मेरी तिब्बत यात्रा' १९३७, 'रूस में पच्चीस मास' १९४४-४७ 'किन्नरदेश' १९४८, 'घुमक्कड़ शास्त्र' १९४९, 'हिमालय परिचय' १९५०, 'कुमायू' १९५१, 'गढ़वाल' १९५२, 'नेपाल' १९५३, 'जौनसार देहरादून, १९५५, 'एशिया के दुर्गम भूखण्ड १९५६, 'चीन में क्या देखा' १९६०।

डा० प्रभाकर माचवे ने राहुल की यात्राओं के आठ उद्देश्य बताये हैं--

(१) नये स्थान के भूगोल, वृक्ष, पशु-पक्षी, जलवायु, नदी-पर्वतों का परिचय देना।

(२) उस स्थान या देश का इतिहास प्रस्तुत करना। समाज और राजनीति का ब्यौरेवार क्रम उपस्थित करना।

(३) वहाँ के निवासियों का वंशशास्त्रीय अध्ययन देना। वे किस उपजाति के हैं? उनके आचार-विचार क्या हैं? आदि।

(४) वहाँ के लोगों के धार्मिक मत-विश्वास का अध्ययन प्रस्तुत करना।

(५) वहाँ की भाषा, साहित्य लोक संस्कृति तथा कलाओं का ब्यौरा देना।

(६) वहाँ के पुरातत्त्व के महत्व की वास्तु-शिल्प का इतिहास देना।

(७) पर्यटन की दृष्टि से सैलानी के लिए उपयुक्त स्थलों का वर्णन।

(८) उस स्थान की वर्तमान दशा और भविष्य में सुधार के लिए सुझाव देना।

उपयुक्त उद्देश्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि उनके यात्रा-साहित्य में उस युग की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक धड़कन मौजूद है। एक बात सच है कि उनके सारे साहित्य का मूल स्थायी-भाव यात्रा है।

यहाँ संक्षिप्त रूप से राहुल जी की यात्रा के दौरान नैसर्गिक सुषमा का एक उदाहरण प्रस्तुत है-"चारों तरफ घेरे हुए पहाड़ जिनके पीछे की ओर हिमाच्छादित शिखर वाले पर्वत हैं, बीच में जगह-जगह लम्बे-लम्बे जलाशय सूर्य की भाँति, कुटिल गति की झेलम, दूर तक सफेदे की दोहरी पंक्तियों के बीच जाने वाली सड़कें, मीलों तक शहर के बाहर भी सेव, बादाम आदि, बागों में बने हुए छोटे-छोटे सुन्दर बंगले, हरी घासों से ढँके लम्बे-लम्बे क्रीड़ा-क्षेत्र, सुन्दर चिनार वृक्षों की मधुर-शीतल छाया के अन्दर हरी घास के मखमली फर्शोंवाली भूमियाँ देखने में बड़ी सुन्दर मालूम होती है।"

राहुल जी की यायावरी प्रवृत्ति की गूंज उनके सम्पूर्ण साहित्य और जीवन-दर्शन पर विशेष रूप से दिखाई देती है। उनके लिए यह पुकार एक जीवन-दर्शन प्रस्तुत करती है।

"सच्चा घुमक्कड़ धर्म, जाति, देश-काल की सारी सीमाओं से मुक्त होता है; वह सच्चे अर्थों में मानवता के प्रेम का उपासक होता है। यह घुमक्कड़ दुनियाँ से लेता कम और देता अधिक है।" इसी प्रभाव के कारण उन्होंने जीवन में व्याप्त रूढ़ि-जर्जर संस्कारों की शृंखला को तोड़-फेंककर सनातन धर्म से आगे बढ़कर आर्यसमाज को अपनाया और फिर आर्य समाज को छोड़कर बौद्ध धर्म ग्रहण किया और अन्त में उससे भी मुक्त होकर वे साम्यवादी या कहें विशुद्ध मानव-धर्मी हो गए। साम्यवाद के प्रति एक प्रकार का रोमानी आकर्षण आपके मन में १९१८–१९ से ही हिन्दी-पत्रिकाओं में प्रकाशित रूसी क्रान्ति की खबरों को पढ़कर जाग्रत हो गया था, किन्तु उसका सैद्धान्तिक ज्ञान और यथार्थ अनुभव १९३५ में रूस की यात्रा के बाद हुआ।

सन् १९३२ में उन्होंने यूरोप में फ्रांस, जर्मनी और इंग्लैण्ड की यात्राएं कीं। पश्चिम के जीवन ने उन्हें आकर्षित नहीं किया। वे दुबारा यूरोप नहीं गए। तिब्बत के बाद उन्हें अगर किसी देश से प्रेम था तो सोवियत रूस से। सोवियत-भूमि पर वे १९३५, १९३७, १९४४ और १९६२ में चार बार गए।

इस प्रकार १९०७ से १९६३ तक राहुल जी बड़ी-बड़ी यात्राएं करते रहे। इस लम्बी यात्रा से गुजरते हुए उनके भ्रमणशील प्रवृत्ति के अनुसार उनमें क्रमशः ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक आदि क्षेत्र में नवीन दृष्टियों का विकास होता गया।

इतिहास के प्रति उनके दृष्टिकोण के सम्बन्ध में रामचन्द्र तिवारी लिखते हैं—"हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राहुल जी ने अंग्रेजों द्वारा लिखित इतिहासों पर विश्वास न करके प्रगतिशील भौतिकवादी दृष्टि से इतिहास को देखने की चेष्टा की है। उन्होंने हिन्दी काव्य धारा (अपभ्रंश काव्य) को जन-साहित्य के रूप में देखने का आग्रह किया है। उसे अन्य भारतीय आर्य-भाषाओं के साहित्य से सम्बद्ध किया है, और अनेक अज्ञात एवं अल्पज्ञात कवियों को सामने लाकर साहित्य के इतिहास की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ा है।"

यात्रा-साहित्य में 'घुमक्कड़ शास्त्र' राहुल के घुमक्कड़ जीवन के अनुभवों का निचोड़ है। इसके द्वारा यात्रा-सम्बन्धी उनकी दृष्टियों का पता लगा सकते हैं।

मनुष्य जाति के इतिहास पर प्रकाश डालें तो यात्रा का सम्बन्ध मात्र जीवन की जरूरतों को पूरा करने के लिए था। इस सम्बन्ध में स्वयं राहुल का कथन है कि "प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बागवानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथ्वी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था, तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।"

यात्रा के दौरान मनुष्य को नवीन बातों की जानकारी प्राप्त हुई और उसके जीवन का बौद्धिक विकास हुआ साथ ही उसके मनन, चिन्तन और विचारों में परिवर्तन आया। प्रकृति के नाना रूपों का दर्शन करने के फलस्वरूप मनुष्य में सौन्दर्य बोध का विकास हुआ। यायावर रचनाकार को यात्रा के दौरान अपना अध्ययन, मनन और चिन्तन अनवरत जारी रखना चाहिए। इन प्रक्रियाओं से गुजरते हुए ही वह यात्रा-साहित्य का सर्जन कर सकता है।

साहित्यकोश के अनुसार—"सौन्दर्य-बोध की दृष्टि से उल्लास की भावना से प्रेरित होकर यात्रा करने वाले यायावर एक प्रकार से साहित्यिक मनोवृत्ति के माने जा सकते हैं, और उनके मुक्त अभिव्यक्ति को यात्रा-साहित्य कहा जाता है।"

सौन्दर्य-बोध का विकास मनुष्य को प्रकृति के नाना रूपों का दर्शन करने के फलस्वरूप हो हुआ, और उसका यह बोध क्रमशः विस्तार पाता गया। इसी कड़ी में कवि, लेखक और कलाकार का जन्म हुआ। राहुल जी उपर्युक्त बातें एक उच्चकोटि के घुमक्कड़ में ही देखते हैं। उनका मानना है कि "हमारे महान कवियों में अश्वघोष तो घुमक्कड़ थे ही। वह साकेत (अयोध्या) में पैदा हुए, पाटलिपुत्र उनका विहारक्षेत्र रहा और अन्त में उन्होंने पुरुषपुर (पेशावर) को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। कविकुल गुरु कालिदास भी बहुत घूमे हुए थे।"

राहुल जी का विचार है कि उच्चकोटि का रचनाकार बनने के लिए यायावर होना जरूरी है। यह

बात सभी श्रेष्ठ साहित्यकारों के सन्दर्भ में खरी नहीं उतरती।

नारी-पुरुष के आकर्षण को वे घुमक्कड़ के लिए वर्जित मानते हैं जबकि राहुल जी स्वयं इस बन्धन में बँध गए। हो सकता है कि इस बन्धन के बाद उन्होंने अपने निजी जीवन में कष्ट उठाया हो। इस अनुभवजन्य ज्ञान के आधार पर वे दूसरे यायावरों को मना करते हैं। प्रेम बन्धन से बचने के लिए मनुष्य जीवन में लज्जा और संकोच को विशेष महत्त्व देते हैं, ये दोनों मानव-जीवन में सन्तरी की भूमिका का निर्वाह करते हैं। इस संदर्भ में 'प्रसाद' जी की ये पंक्तियाँ याद आती हैं जो कि हमारी मनोवृत्तियों का यथार्थ चित्रण करती है—

इतना न चमत्कृत हो बाले !
अपने मन का उपकार करो।
मैं एक पकड़ हूँ जो कहती,
ठहरो कुछ सोच-विचार करो॥

राहुल जी का मत है कि "जिस व्यक्ति को अपनी, अपने देश और समाज की प्रतिष्ठा का ख्याल होता है, उसे लज्जा और संकोच करना ही होता है। उच्च कोटि के घुमक्कड़ कभी ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकते जिससे उनके व्यक्तित्व या देश पर लांछन लगे।"

घुमक्कड़ी वृत्ति में कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है; इसलिए राहुल जी आगाह करते हैं कि इस वृत्ति को अपनाने के लिए "न तो माता के आँसू बहने की परवाह करनी चाहिए, न पिता के भय और उदास होने की, न भूल से पत्नी के रोने-धोने की फिक्र करनी चाहिए और न किसी तरुणी को अभागे पति के कलपने की।"

मनुष्य जीवन में पारिवारिक रिश्ते हमारी गहरी संवेदनाओं से जुड़े होते हैं। इनके बन्धन से मुक्त होने पर ही यायावर बनना आसान होता है जो कि व्यावहारिक धरातल पर बहुत ही मुश्किल है।

एक बात यहाँ मैं विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि घर-बार छोड़कर बाहर निकल जाने से कोई साहित्यिक यात्री की संज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता। इसके लिए यायावरी आत्मा का साहित्यकार होना जरूरी है जो कि जीवन और जगत के आन्तरिक स्वरों को पहचान सके। संसार के बड़े-बड़े यायावर अपनी मनोवृत्ति में में साहित्यिक थे। फाहियान, ह्वेनसांग, इब्नबतूता, अलबरुनी, मार्कोपोलो और बर्नियर आदि प्रसिद्ध घुमक्कड़ हुए हैं। भारतीय यायावरों में देवेन्द्र सत्यार्थी, सत्यनारायण, यशपाल, जगदीशचन्द्र जैन, राजवल्लभ ओझा, गोविन्द दास, भगवत शरण उपाध्याय, अमृतराय, रांगेय राघव, रामवृक्ष बेनीपुरी, काका कालेलकर हंस कुमार तिवारी, अज्ञेय और विष्णु प्रभाकर आदि का नाम आता है।

यायावरों के सम्बन्ध में राहुल जी का मन्तव्य है "एक घुमक्कड़ी को दुनिया से जितना लेना है, उससे सौ-गुना अधिक देना है। जो इस दृष्टि से घर छोड़ता है, वही सफल और यशस्वी घुमक्कड़ बन सकता है।"

राहुल जी का विचार है कि घुमक्कड़ी प्रवृत्ति के कारण ही समाज में व्याप्त धार्मिक कूप-मंडूकता के विरोध के प्रचार में बुद्ध, महावीर, शंकर, रामानन्द, चैतन्य महाप्रभु, गुरुनानक, नामदेव, ज्ञानेश्वर, कबीर, तुलसी, स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजाराम मोहन राय और स्वामी विवेकानन्द आदि लोगों का विशेष योगदान है। इन लोगों ने सामाजिक एवं धार्मिक विसंगतियों को दूर करने का प्रयास किया। इस सन्दर्भ में राहुल जी की मान्यता है कि—

"बीसवीं शताब्दी के भारतीय घुमक्कड़ों की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। इतना लिखने से मालूम हो गया होगा कि संसार में यदि कोई अनादि सनातन धर्म है, तो वह घुमक्कड़-धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, वह केवल घुमक्कड़-धर्म के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।" राहुल जी के यात्रा-वर्णन में स्थान विशेष की सामाजिक संस्कृति अपने आन्तरिक और बाह्य रूपों में हमारे सामने आती है।

घुमक्कड़ी धर्म किसी जाति, धर्म, वर्ण, कुल और वर्ग तक सीमित नहीं रहता। इसके लिए स्वावलम्बन और आत्म-सम्मान इन दोनों गुणों का होना आवश्यक है। धर्म और घुमक्कड़ी के सम्बन्ध में राहुल जी का मत है कि "घुमक्कड़ी व्रत और संकीर्ण साम्प्रदायिकता एक साथ नहीं चल सकते। वह मानव-मानव में संकीर्ण भेद-भाव को नहीं पसन्द करता। सभी धर्मों ने मानवता की जो अमूल्य सेवाएँ भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में की हैं, उसकी वह कदर करता है; यद्यपि धर्मान्धों की वह क्षमा नहीं कर सकता।"

बात राहुल जी ने यात्रा के सम्बन्ध में की है, परन्तु धर्म और सम्प्रदाय के सम्बन्ध में उनके विचार काफी प्रासंगिक हो गए हैं। क्योंकि आजकल धर्म का अर्थ साम्प्रदायिकता से लिया जा रहा है। वास्तविक रूप से धर्म और सम्प्रदाय में अन्तर है। विनोद सुरोलिया के अनुसार 'धर्म मनुष्य के अन्दर की एक ऐसी प्रेरणा, भावना, प्रवृत्ति एवं विधि व्यवस्था है; जो मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को ऊँचा उठाती हैं। धर्म सृष्टि का प्राणतत्त्व है। धर्म के अभाव में सृष्टि के तत्त्वों की पहचान नहीं हो सकती।''

धर्म में सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया: की भावना निहित है। सामान्यतया आज जिसे धर्म समझा जा रहा है, वह धर्म नहीं सम्प्रदाय है। धर्म व्यक्ति, समाज और राज्य के दैनिक क्रिया-कलापों में एक नैतिक हस्तक्षेप है। धर्म और साम्प्रदायिकता में बुनियादी अन्तर है। धर्म मानवीय मूल्यों को ऊँचाई की ओर ले जाता है; जबकि साम्प्रदायिकता उसे दल-दल में ढकेलती है।

जहाँ धर्म मानव-मानव को जोड़ता है वहीं साम्प्रदायिकता आपस में फूट डालती है। संकीर्ण साम्प्रदायिकता घुमक्कड़ी व्रत के लिए ही खतरनाक नहीं है बल्कि देश एवं समाज के लिए भी है।

राहुल जी यात्रा के दौरान मानवीयता वाले पक्ष पर बराबर ध्यान देते हैं उनका मुख्य विषय मानव और मानव-समाज है। उन्होंने व्यक्ति की शक्ति और सत्ता को सर्वोपरि मानकर संघर्ष का संदेश दिया। साधारण मनुष्य की छवि उनके मानस पटल पर सदैव अंकित रहती थी। मुलतान के वर्णन में वे लिखते हैं—"मुलतान सिन्ध और पंजाब की सन्धि पर है। इसलिए यह दोनों से विलक्षण है। यहाँ की पोशाक में सिन्धियों की सादगी झलकती है। देहाती लोग अधिकांश मुसलमान हैं। कहीं-कहीं कुछ हिन्दू खेती करने वाले मिलते हैं। हिन्दू ज्यादातर शहरों में रहते हैं और व्यापार तथा नौकरी करते हैं। भाषा न तो पंजाबी है न सिन्धी।"

राहुल सांकृत्यायन जी की साहित्यिक-दृष्टि बहुत ही व्यापक है। यायावर को गोस्वामी तुलसीदास की तरह स्वान्तः सुखाय में निहित परजन हिताय की भावना से यात्रा करनी चाहिए। जिससे वह हजारों और लाखों व्यक्तियों की आँखें बन सके। उसके यात्रा-साहित्य में प्रखर युगबोध की झलक हो। राहुल जी का विचार है कि "उच्च श्रेणी के घुमक्कड़ के लिए लेखनी का धनी होना बहुत जरूरी है। इसके साथ ही 'घुमक्कड़' को अपनी लेखनी चलाते समय बहुत संयम रखने की आवश्यकता है।"

वास्तव में यात्रा-साहित्य के विभिन्न रूपों का विकास गद्य शैली के विकास के साथ ही सम्भव हो सका है। जिस प्रकार आधुनिक साहित्य की विभिन्न विधाओं पर पाश्चात्य साहित्य का किसी न किसी रूप में प्रभाव है; उसी प्रकार हिन्दी के आधुनिक यात्रा-साहित्य पर भी उसका ऋण स्वीकार करना चाहिए। अंग्रेजी का प्रसिद्ध निबंधकार स्टीवेन्सन घुमक्कड़ शास्त्री ही था। निबन्ध-शैली की व्यक्तिपरकता, स्वच्छन्दता तथा आत्मीयता आदि गुण यात्रा-साहित्य में पाए जाते हैं। राहुल जी लेखनी के संयम की बात की है; इस संबंध में डॉ० रघुवंश का विचार है कि "यात्री सर्वसाधारण की दृष्टि से प्रत्येक बात का विवरण देकर ही नहीं चलता; और यदि विवरण तथा विस्तार देना ही होता है तो वह उन्हें अपने भावावेश में प्रस्तुत करता है अथवा आत्मीयता के वातावरण में उपस्थित करता है; एक बात और भी महत्त्वपूर्ण है यात्री को अपने वर्णन में संवेदनशील होकर भी निरपेक्ष रहना चाहिए; नहीं तो यात्री यात्रा के

स्थान पर प्रधानतः अपने को ही चित्रित करने लगेगा।"

यात्रा-साहित्य की विशेषता इस बात में है कि इसमें स्थान, दृश्य, प्रदेश, गाँव, नगर और देश स्वतः मुखरित होते हैं और उनका अपना व्यक्तित्व भी उभरता चलता है। यात्री में कवि का भावाकुल मन, निबंधकार की मस्ती एवं उसकी वैज्ञानिक बुद्धि और इतिहासकार की ऐतिहासिक दृष्टि आदि बातें होनी चाहिए।

यात्रा से गुजरते हुए राहुल सांकृत्यायन ने लोक-जीवन, लोक-साहित्य का गहन अध्ययन किया।

अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है। इस सम्बन्ध में उनका मानना है कि साहित्य सर्जन जन-सामान्य की भाषा में ही होना चाहिए और यही कारण है कि उन्होंने समाजशास्त्र, विज्ञान, धर्म, दर्शन तथा साहित्य आदि क्षेत्रों के ज्ञान को जनभाषा में सहज एवं सुबोध रूप में रखने का प्रयत्न किया। राहुल जी को छत्तीस भाषाओं की जानकारी थी। इसके पीछे भी उनकी घुमक्कड़ी का अनुभव ही काम करता है। राहुल जी ने 'संस्कीरत कूप-जल भाषा बहता नीर' के कबीरी वाणी के महत्व को यात्रा के दौरान ही जाना और समझा; इसीलिए गूढ़ से गूढ़ विषयों को उन्होंने सहज बोधगम्य भाषा में प्रस्तुत कर उसे समाजोपयोगी बनाया। जिस समय राहुल जी लिख रहे थे उस समय रानाडे, राधाकृष्णन जैसे दर्शनवेत्ता, जगदीशचन्द्र बसु, सी॰ वी॰ रमण जैसे वैज्ञानिक अपनी प्रतिभा का दिग्दर्शन करा रहे थे लेकिन राहुल जी इन सबसे विशिष्ट थे क्योंकि वे प्रयोगशाला और अध्ययन कक्ष तक सीमित न थे, वे प्रवृत्तिगत घुमक्कड़ थे और इसी संदर्भ में सक्रिय राजनीति, विश्व-भ्रमण तथा प्राध्या-पक जैसे उपक्रमों से जुड़ते और अपने अनुभवों को पुष्ट करते रहे।

अन्ततः हम देखते हैं कि राहुल जी ने घुमक्कड़ी को मनुष्य का सर्वोपरि धर्म माना। पंडित शिवशर्मा की धारणा है कि "यायावर अनेक बन सकते हैं; किन्तु उनके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे यायावरी वृत्ति को अपनाने में तादात्म्य स्थापित कर सकें। राहुल जी जहाँ होते हैं बिल्कुल घरैया होकर रहते हैं। अपरिचितों के परिवार में भी पारिवारिक सदस्यता हासिल करने वाले ऐसे यायावर १६–१८ वीं शताब्दी चीन, जर्मनी-अमेरिका और इंग्लैण्ड में ही देखे जा सकते थे। बीसवीं शताब्दी के विश्व में ऐसे विरले यायावर राहुल ही हो सकते हैं; द्वितीयोनास्ति।"

राहुल जी की यायावरी प्रवृत्ति ने हमें एक बड़ा साहित्य भण्डार दिया। इनकी रचनाओं में जहाँ एक ओर प्राचीन के प्रति मोह, इतिहास का गौरव आदि है तो दूसरी ओर उनकी अनेक रचनाएँ स्थानीय रंगत को लेकर मोहक चित्र एवं नवीन दृष्टि उपस्थित करती है। इस सम्बन्ध में संस्कृति विभाग के संयुक्त सचिव और प्रख्यात कवि आलोचक अशोक वाजपेयी के विचार इस प्रकार हैं -"राहुल जी पारंपरिक किस्म के लेखक नहीं थे। वह भौगोलिक रूप में ही यायावर नहीं थे; बल्कि दृष्टि के भी यायावर थे।"

यायावरी दृष्टि के कारण ही राहुल जी ने धार्मिक आन्दोलनों के मूल में जाकर सर्वहारा धर्म को पकड़ा। इतिहास के पन्नों में असाधारण के स्थान पर साधारण को विशेष महत्व दिया। उनकी यायावरी प्रवृत्ति के कारण उनके रचना-संसार में जनता और मेहनतकश मजदूरों को विशेष स्थान मिला। इसके अतिरिक्त उन्होंने लोगों को करीब से जाना और समझा। इस कारण उन्होंने अपनी बात को बहुत सरल एवं सहज शैली में बिना किसी लाग लपेट के लोगों के सामने परोसा। राहुल जी की रचनाएं साधारण पाठकों के लिए भी मनोरंजक एवं बोधगम्य हैं। यात्रा के दौरान इन्होंने देश एवं विदेश की अनेक भाषाओं का ज्ञान अर्जित किया।

भ्रमणशील होने के कारण राहुल जी समाज में व्याप्त सामाजिक रूढ़ियों, अन्ध-विश्वासों, पाखण्डों और जड़ संस्कारों से भली-भाँति परिचित हुए और उन्हें उखाड़ फेंकने के विश्वासी रहे हैं। मानव को शोषण मुक्त होकर साम्प्रदायिकता की संकीर्ण भावना से ऊपर उठकर आपस में सद्भाव, सहअस्तित्व एवं सर्वधर्म समभाव की स्थापना करना उनका मुख्य उद्देश्य था। समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को हम नकार नहीं सकते।

राहुल सांकृत्यायन के बहुआयामी प्रतिभा के विकास में उनकी यायावरी प्रवृत्ति का ही विशेष महत्त्व है; जिसके फलस्वरूप उनमें आत्म-निर्भरता, आत्मानुशासन, कठिन परिश्रम, दृढ़ संकल्प, निर्भीकता, स्पष्टवादिता, मानवता में आस्था, निरहंकार प्रवृत्ति, संपत्ति के प्रति निरपेक्ष भाव, मौलिकता, रूढ़िवादिता का विरोध और बौद्धिकता आदि गुणों का विकास हुआ।

उपर्युक्त तमाम खूबियों के बाद विडम्बना इस बात की है कि हम राहुल सांकृत्यायन को जन्म-शताब्दी वर्ष मनाने की घोषणा के बाद ही अधिक जान पाए हैं। हिन्दी-साहित्य में भी पठन-पाठन के क्षेत्र में इनकी अच्छी पहचान नहीं बन सकी। जैसा कि मैंने शुरू में ही कहा है कि घुमक्कड़ी के रूप में ही इन्हें अधिक ख्याति मिली; फिर भी हम इनकी अद्भुत प्रतिभा का लोहा मानते हैं, और इनके साहित्यिक योगदान एवं नवीन दृष्टिकोणों को कभी भूल नहीं सकते।

निश्चय ही राहुल जी के विचार हमारे भीतर की बुराइयों को झकझोर कर विचारों को आन्दोलित करने में सहायक सिद्ध होंगे और नूतन दृष्टि का निर्माण करेंगे।

❂